2024: CGHC: 48043

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक 336 वर्ष 2023

1. राकेश कुमार तिवारी, आत्मज स्व. श्री रामावतार तिवारी, आयु लगभग 43 वर्ष, निवासी ग्राम कुशलपुर, रायपुर, जिला रायपुर (छ.ग.)
2. श्रीमती इन्द्राणी शर्मा, पत्नी श्री पवन कुमार शर्मा, आयु लगभग 56 वर्ष, निवासी ग्राम टेडेसरा, तहसील व जिला राजनांदगांव (छ.ग.)

----**अपीलार्थीगण**

विरुद्ध

1. श्रीमती नीता दुबे, पत्नी श्री लक्ष्मी नारायण दुबे, आयु लगभग 47 वर्ष, निवासी ग्राम/पोस्ट थानखम्हरिया, सरस्वती स्कूल के पास, थानखम्हरिया, जिला बेमेतरा (छ.ग.)
2. श्रीमती रीता शर्मा, पत्नी श्री सुरेश शर्मा, आयु लगभग 45 वर्ष, निवासी ग्राम सिलहटी, पोस्ट पोड़ी, जिला कबीरधाम (छ.ग.)
3. रुकमणी बाई, विधवा स्व. श्री रामावतार तिवारी, आयु लगभग 78 वर्ष, निवासी ग्राम उरैया, पोस्ट बेलतरा, थाना थानखम्हरिया, जिला बेमेतरा (छ.ग.)
4. श्रीमती बुलबुल शर्मा, आत्मजा श्री अश्वनी कुमार तिवारी, आयु लगभग 33 वर्ष, निवासी ग्राम पोस्ट केसदा, तहसील सिमगा, भाटापारा, जिला बलौदाबाजार–भाटापारा (छ.ग.)
5. श्रीमती आरती शर्मा, आत्मजा श्री अश्वनी कुमार तिवारी, आयु लगभग 29 वर्ष, निवासी ग्राम पोस्ट केसदा, तहसील सिमगा, भाटापारा, जिला बलौदाबाजार–भाटापारा (छ.ग.)
6. रांकी तिवारी, आत्मज श्री अश्वनी कुमार तिवारी, आयु लगभग 23 वर्ष, निवासी ग्राम पोस्ट केसदा, तहसील सिमगा, भाटापारा, जिला बलौदाबाजार–भाटापारा (छ.ग.)
7. रमेश कुमार तिवारी, आत्मज स्व. श्री रामावतार तिवारी, आयु लगभग 51 वर्ष, निवासी ग्राम उरैया, पोस्ट बेलतरा, थाना थानखम्हरिया, जिला बेमेतरा (छ.ग.)
8. छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा कलेक्टर, बेमेतरा (छ.ग.)

----**प्रत्यर्थीगण**

अपीलार्थीगण की ओर से:	श्री किशोर भादुड़ी, वरिष्ठ अधिवक्ता, साथ में सुश्री स्मृति सिंह एवं श्री खुलेश साहू, अधिवक्तागण
प्रत्यर्थी क्रमांक 1 एवं 2 की ओर से:	श्री अनुराग सिंह, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी क्रमांक 3 एवं 7 की ओर से:	श्री विवेक कुमार अग्रवाल, अधिवक्ता
राज्य प्रत्यर्थी की ओर से:	श्री प्रमोद रामटेके, पैनल अधिवक्ता

एकल पीठ:

माननीय न्यायमूर्ति श्री पार्थ प्रतीम साहू

बोर्ड पर आदेश

04.12.2024

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

1. यह द्वितीय अपील अपीलार्थीगण द्वारा सिविल अपील क्रमांक A/17/2020 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 3.5.2023 की वैधता और स्थिरता को चुनौती देते हुए प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा विद्वान प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, बेमेतरा ने सिविल वाद क्रमांक 5A/2014 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 29.2.2020 को संपुष्ट किया है। उक्त डिक्री के माध्यम से विद्वान सिविल जज वर्ग–2, साजा, जिला बेमेतरा ने वादी/प्रत्यर्थी क्रमांक 1 एवं 2 द्वारा प्रस्तुत वाद को स्वीकार किया था और वर्तमान अपीलार्थीगण द्वारा प्रस्तुत प्रतिदावा को खारिज कर दिया था।

2. इस द्वितीय अपील को प्रस्तुत करने की ओर ले जाने वाले तथ्य यह हैं कि वादी/प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 ने स्वत्व की घोषणा, आधिपत्य, स्थायी निषेधाज्ञा और वाद संपत्ति के विभाजन हेतु दीवानी वाद प्रस्तुत किया, जिसका विवरण वादपत्र में उल्लिखित है। वादपत्र में अन्य बातों के साथ–साथ यह अभिवचन किया गया कि वादी, प्रतिवादी क्रमांक 2, 6 और 7 भाई–बहन हैं। प्रतिवादी क्रमांक 3, 4 और 5 मंजू तिवारी (वादियों की बहन) की संतानें हैं। प्रतिवादी क्रमांक 1 वादियों, प्रतिवादी क्रमांक 2, 6, 7 और उक्त मंजू तिवारी की माता है। वादियों के पिता, नामतः रामावतार तिवारी, सरकारी सेवा में थे और शिक्षक के पद पर कार्यरत थे। सेवाकाल के दौरान 8.8.1984 को उनकी मृत्यु हो गई और वाद के पक्षकार उनके उत्तराधिकारी हैं। उक्त रामावतार तिवारी के नाम पर ग्राम उरैया, तहसील थानखम्हरिया, जिला बेमेतरा में स्थित पैतृक संपत्ति दर्ज थी। उन्होंने पैतृक संपत्ति की कृषि आय और अपनी सेवा की आय से अन्य संपत्तियां भी खरीदी थीं। उक्त रामावतार तिवारी के सभी उत्तराधिकारी पैतृक संपत्ति में समान हिस्से के हकदार हैं। रामावतार तिवारी की मृत्यु की तिथि पर प्रतिवादी क्रमांक 6 और 7 अविवाहित और नाबालिग थे। रामावतार तिवारी की मृत्यु के पश्चात, वादियों के विवाह सहित परिवार का उत्तरदायित्व प्रतिवादी क्रमांक 6 पर आ गया। वाद के पक्षकारों को वित्तीय संकट का सामना करना पड़ा और इसलिए, पक्षकारों के बीच सहमति से, प्रतिवादी क्रमांक 6 ने सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन प्रस्तुत किया। उक्त आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि प्रतिवादी क्रमांक 6 के परिवार के पास अनुकंपा नियुक्ति के लिए विद्यमान नियमों के तहत निर्धारित सीमा से अधिक कृषि भूमि है। प्रतिवादी क्रमांक 1 (स्व. रामावतार तिवारी की विधवा), जो परिवार में एकमात्र वयस्क व्यक्ति थी, ने स्वर्गीय रामावतार तिवारी के नाम पर दर्ज अचल संपत्ति का नाममात्र का विभाजन करने का निर्णय लिया और इस संबंध में 19.1.1993 को प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 के बीच पंजीकृत नाममात्र का विभाजन पत्र निष्पादित किया गया।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

उक्त विभाजन पत्र में प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 को दो हेक्टेयर भूमि दी गई और प्रतिवादी क्रमांक 7 को 9.89 हेक्टेयर भूमि दी गई। किए गए इस असंगत विभाजन के दृष्टिगत, विभाजन पत्र स्वयं ही अवैध है। चूंकि 19.1.1993 का विभाजन पत्र नाममात्र का था, इसलिए विभाजन पत्र के पक्षकारों ने न तो तदनुसार कार्य किया और न ही वे उसमें वर्णित भूमि के अलग–अलग कब्जे में थे। प्रतिवादी क्रमांक 7 भी पृथक आधिपत्य में नहीं था, भले ही वह रायपुर में पदस्थ था और निजी नौकरी कर रहा था। पैतृक संपत्ति का विधिनुसार विभाजन नहीं किया गया था। दिनांक 14.5.2013 को प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 के पक्ष में साक्षियों की उपस्थिति में एक सहमति पत्र निष्पादित किया गया था, जिसमें वाद संपत्ति को पैतृक बताया गया था और उक्त संपत्ति में प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 का हिस्सा क्रमशः 3.30 एकड़ और 5 एकड़ होने का उल्लेख किया गया था तथा तदनुसार जोतों के विभाजन हेतु सहमति भी व्यक्त की गई थी। सहमति पत्र के आधार पर, प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 ने जोतों के विभाजन हेतु तहसीलदार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया, हालांकि, प्रतिवादी क्रमांक 7 ने यह अभिवचन किया कि प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 पट्टेदार/किरायेदार के रूप में भूमि के आधिपत्य में नहीं हैं। उसे किसी भी राशि का भुगतान नहीं किया गया था और तदनुसार, आवेदन खारिज कर दिया गया। चूंकि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति है, अतः वादीगण वाद संपत्ति में एक–सातवें हिस्से के हकदार हैं। वाद का कारण तब उत्पन्न हुआ जब दिनांक 14.5.2013 के सहमति पत्र के आधार पर जोतों के विभाजन के लिए तहसीलदार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 ने वादीगण द्वारा प्रस्तुत वाद के उत्तर में जवाब दावा प्रस्तुत किया, जिसमें दिनांक 19.1.1993 के विभाजन पत्र को नाममात्र का होना तथा प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा उनके साथ हुए समझौते के आधार पर सहमति पत्र के निष्पादन को स्वीकार किया गया। यह भी अभिवचन किया गया कि छत्तीसगढ़ भू–राजस्व संहिता, 1959 की धारा 169 (2) (क) (ख) के प्रावधानों के अनुसरण में, प्रतिवादी क्रमांक 6 विभाजन पत्र में उल्लिखित भूमि का स्वामी बन गया, क्योंकि प्रतिवादी क्रमांक 7 ने प्रतिवादी क्रमांक 6 को उक्त संपत्ति से बेदखल करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया है। प्रतिवादी क्रमांक 1 से 6 द्वारा यह भी अभिवचन किया गया कि वाद के पक्षकार वाद संपत्ति में प्रत्येक एक–सातवें हिस्से के हकदार हैं।

4. प्रतिवादी क्रमांक 2 ने जवाब दावा में अभिवचन किया कि पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन की तिथि पर वाद के पक्षकार उपस्थित थे। विभाजन विधिनुसार और पक्षकारों की सहमति से किया गया था। विभाजन पत्र के निष्पादन के समय, वादीगण और प्रतिवादी क्रमांक 3 से 5 के

बीच यह सहमति बनी थी कि वे वाद संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं लेंगे और न ही अपने अधिकारों का दावा करेंगे।

5. प्रतिवादी क्रमांक 3 से 5 ने भी अपना जवाब दावा प्रस्तुत किया और उसमें यह अभिवचन किया कि उन्हें दिनांक 19.1.1993 के विभाजन पत्र के निष्पादन के बारे में जानकारी नहीं थी और इसलिए, यह उनकी सहमति से नहीं था। विभाजन पत्र उन पर आबद्धकर नहीं है। चूंकि विभाजन पत्र नाममात्र का था, इसलिए विभाजन की शर्तों के अनुसार उस पर अमल नहीं किया गया था। दिनांक 19.1.1993 के विभाजन पत्र पर स्वर्गीय रामावतार तिवारी के सभी उत्तराधिकारियों के हस्ताक्षर नहीं हैं। यह भी अभिवचन किया गया कि उन्हें दिनांक 14.5.2013 के सहमति पत्र के निष्पादन के बारे में भी जानकारी नहीं है। चूंकि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति है, वे वाद संपत्ति में समान हिस्से के हकदार हैं।

6. प्रतिवादी क्रमांक 7 ने अलग से जवाब दावा प्रस्तुत किया और अभिवचन के अनुसार नातेदारी को स्वीकार किया। यह भी स्वीकार किया गया कि रामावतार तिवारी की मृत्यु 8.8.1994 को हुई थी और उनकी मृत्यु के पश्चात, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार, प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 ही एकमात्र शेष उत्तराधिकारी हैं। वाद परिसीमा अवधि के भीतर प्रस्तुत नहीं किया गया है। दिनांक 19.1.1993 को विभाजन पत्र निष्पादित किया गया था, जिसके अनुसार, प्रतिवादी क्रमांक 6 को अनुकंपा नियुक्ति; प्रतिवादी क्रमांक 6 और प्रतिवादी क्रमांक 1 को संयुक्त रूप से पांच एकड़ भूमि और शेष कृषि भूमि प्रतिवादी क्रमांक 7 के हिस्से में आई। विभाजन पत्र पंजीकृत है। विभाजन विधिनुसार किया गया था। वादीगण को विभाजन की मांग करते हुए वाद प्रस्तुत करने का कोई अधिकार नहीं है। जवाब दावा में यह स्वीकार नहीं किया गया कि वाद के पक्षकारों के पिता रामावतार तिवारी की मृत्यु के बाद संपूर्ण जिम्मेदारी प्रतिवादी क्रमांक 7 पर आ गई थी। यह अभिवचन किया गया कि बहनों और भाइयों की शिक्षा तथा उनके विवाह के उद्देश्य से, प्रतिवादी क्रमांक 7 ने अपने हिस्से में आई खसरा नंबर 293/1, रकबा 0.27 हेक्टेयर की भूमि बेच दी थी। वाद विभाजन के 21 वर्ष बाद प्रस्तुत किया गया था और इसलिए, यह परिसीमा द्वारा वर्जित है। हस्ताक्षर कोरे स्टाम्प पेपर पर प्राप्त किए गए थे, इसलिए सहमति पत्र कूटरचित एवं फर्जी है, जिसके आधार पर तहसीलदार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया गया था। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में संशोधन लागू होने के बाद भी वादीगण वाद संपत्ति पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं कर सके क्योंकि यह पारिवारिक समझौते को प्रभावित नहीं करेगा।

7. विद्वान विचारण न्यायालय ने संबंधित पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विचारार्थ कुल 09 वाद–प्रश्न विरचित किए और इस वाद–प्रश्न को कि 'क्या वादीगण यह घोषणात्मक डिक्री प्राप्त

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

करने के हकदार हैं कि अनुसूची 'अ' में वर्णित वाद संपत्ति के संबंध में निष्पादित पंजीकृत विभाजन पत्र दिनांक 19.1.1993 वादीगण पर आबद्धकर नहीं है', प्रमाणित पाया और यह धारित किया कि वादीगण वाद संपत्ति में प्रत्येक एक–सातवें हिस्से के हकदार हैं। हालांकि, यह वाद–प्रश्न कि 'क्या प्रतिवादी क्रमांक 1 से 3 द्वारा प्रस्तुत प्रतिदावा पोषणीय है', सकारात्मक रूप से तय किया गया अर्थात् प्रमाणित पाया गया। इसके अतिरिक्त, यह वाद–प्रश्न कि क्या वादीगण द्वारा प्रस्तुत वाद परिसीमा अवधि के बाहर है, नकारात्मक रूप से तय किया गया और वाद स्वीकार कर लिया गया। विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 27.2.2020 को अपील में चुनौती दी गई थी, जिसे आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री के माध्यम से खारिज कर दिया गया।

8. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि दोनों न्यायालयों ने इस बात पर उचित रीति से विचार नहीं किया कि वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 5 में किए गए संशोधन का क्या प्रभाव होगा, जो दिनांक 9.9.2005 को लागू हुआ था। वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6(1) के प्रावधानों के साथ–साथ धारा 6(5) में संलग्न स्पष्टीकरण का उल्लेख करते हुए, यह प्रतिपादित किया गया कि संशोधन वर्ष 2004 से पूर्व हुए विभाजन को प्रभावित नहीं करेगा। धारा 6 में संशोधन प्रभावी होने से पहले ही, जब दिनांक 19.1.1993 को पंजीकृत विभाजन पत्र निष्पादित किया गया था, तब उत्तराधिकार सप्रतिबंध हो गया था, और इसलिए, धारा 6 के तहत संशोधन लागू होने के बाद भी, परिवार के सदस्यों को 1956 के अधिनियम की धारा 6 के तहत सहदायिकी संपत्ति में हिस्से का दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 'प्रशांत कुमार साहू एवं अन्य बनाम चारुलता साहू एवं अन्य', 2023 लाइव लॉ (एस सी) 262 और 'रामिसेट्टी वेंकटन्ना एवं अन्य बनाम नस्याम जमाल साहेब एवं अन्य', 2023 एस सी सी ऑनलाइन एस सी 521 में दिए गए निर्णयों; तथा मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा अपील वाद क्रमांक 1016/2008 (वी. बाक्यम बनाम सी. कंडासामी गोंडर (मृत) एवं अन्य) में पारित आदेश दिनांक 17.2.2022 का अवलंब लिया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. उन्होंने तर्क दिया कि पंजीकृत विभाजन पत्र दिनांक 19.1.1993 को निष्पादित किया गया था, अर्थात् धारा 6 में लाए गए संशोधन और नियत तिथि से काफी पहले, और इसलिए, जो विभाजन वर्ष 1993 में पहले ही प्रभावी हो चुका है, उसे संयुक्त परिवार के कुछ सदस्यों के कहने पर पुनः नहीं खोला जा सकता है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि वाद में वादीगण ने केवल यह घोषणात्मक सहायता मांगी है कि दिनांक 19.1.1993 का पंजीकृत विभाजन पत्र उन पर आबद्धकर नहीं है, जबकि उन्होंने उक्त विभाजन पत्र को शून्य घोषित करने की कोई अतिरिक्त सहायता नहीं मांगी है। पंजीकृत विभाजन पत्र दिनांक 19.1.1993 को शून्य एवं अमान्य घोषित करने की सहायता के

अभाव में, विभाजन का वाद चलने योग्य नहीं होगा, क्योंकि उक्त राहत न मांगने की स्थिति में, दिनांक 19.1.1993 का पंजीकृत विभाजन पत्र अस्तित्व में बना रहेगा। उन्होंने आगे तर्क दिया कि पंजीकृत विभाजन पत्र दिनांक 19.1.1993 का है और पक्षकारों द्वारा इस पर अमल किया गया था, जबकि दीवानी वाद पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन की तिथि से 21 वर्ष बाद प्रस्तुत किया गया है, अतः यह वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है। वादीगण ने निर्धारित परिसीमा अवधि के भीतर पंजीकृत विभाजन पत्र पर कोई प्रश्न नहीं उठाया है। दोनों न्यायालयों ने उपर्युक्त आधार और वाद में निहित पहलुओं पर उचित तरीके से विचार न करने की त्रुटि की है और त्रुटिपूर्ण ढंग से वादीगण द्वारा प्रस्तुत वाद को डिक्री कर दिया है।

10. प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के तर्कों का विरोध करते हुए यह तर्क दिया कि विचारण न्यायालय और साथ ही अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री साक्ष्य के उचित मूल्यांकन और मामले के तथ्यों पर लागू विधि पर आधारित हैं, अतः उनमें किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने तर्क दिया कि वादपत्र के अभिवचनों में, वादीगण ने विशेष रूप से दिनांक 19.1.1993 के पंजीकृत विभाजन पत्र की प्रकृति को नाममात्र का बताया है। यद्यपि विभाजन पत्र निष्पादित किया गया था, फिर भी प्रत्यर्थी क्रमांक 1, 6 और 7 वर्ष 2013 तक संयुक्त रूप से आधिपत्य में रहे। पंजीकृत विभाजन पत्र की विषय–वस्तु पर उस विभाजन पत्र में वर्णित संपत्ति के विवरण के अनुसार अमल नहीं किया गया था। विभाजन पत्र को देखने मात्र से यह स्पष्ट है कि यह नाममात्र का है, क्योंकि विभाजन असंगत था और प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 को हिस्से में केवल दो हेक्टेयर भूमि दी गई थी, जबकि प्रतिवादी क्रमांक 7 को हिस्से में 9.89 एकड़ भूमि दी गई थी। वादपत्र में यह विनिर्दिष्ट अभिवचन है कि नाममात्र के विभाजन पत्र के निष्पादन का एकमात्र उद्देश्य अनुकंपा नियुक्ति प्रदान किए जाने हेतु आवेदन के अस्वीकरण के आधार से बचना था; जो कि प्रतिवादी क्रमांक 6 द्वारा प्रस्तुत किया गया था और परिवार के सदस्यों के संयुक्त नाम पर दर्ज कृषि भूमि के क्षेत्रफल को 5 एकड़ से अधिक होने के आधार पर खारिज कर दिया गया था। अतः, प्रतिवादी क्रमांक 6 के नाम पर दर्ज कृषि भूमि को 5 एकड़ से कम दिखाने के लिए नाममात्र का विभाजन पत्र निष्पादित और पंजीकृत किया गया था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि रामावतार तिवारी की मृत्यु के पश्चात, प्रतिवादी क्रमांक 1 ही परिवार में एकमात्र वयस्क सदस्य थी और परिवार के सभी सदस्यों ने उनकी संतान होने के नाते उनके मार्गदर्शन के अनुसार कार्य किया। अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा दिया गया यह तर्क कि 'जब तक दिनांक 19.1.1993 के पंजीकृत विभाजन पत्र को निरस्त करने या उसे शून्य घोषित करने की राहत नहीं मांगी जाती, तब तक वाद चलने

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

योग्य नहीं होगा', सही नहीं है। चूंकि वादीगण उक्त दस्तावेज़ (अर्थात् पंजीकृत विभाजन पत्र) के पक्षकार नहीं थे, इसलिए उन्हें उक्त दस्तावेज़ को शून्य घोषित करने की राहत मांगने की आवश्यकता नहीं है। वे यह घोषणा करने हेतु वाद प्रस्तुत कर सकते हैं कि दिनांक 19.1.1993 का पंजीकृत विभाजन पत्र उन पर आबद्धकर नहीं है क्योंकि वे इसके पक्षकार नहीं थे। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि वाद का कारण केवल तब उत्पन्न हुआ जब दिनांक 14.5.2013 के सहमति पत्र के आधार पर जोत के विभाजन हेतु तहसीलदार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया गया। इसके तुरंत बाद 11.8.2014 को, अर्थात् एक वर्ष और तीन महीने की अवधि के भीतर, वाद प्रस्तुत किया गया था, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि वाद परिसीमा अवधि के बाद प्रस्तुत किया गया था। यह भी तर्क दिया गया कि चूंकि वादीगण पंजीकृत विभाजन पत्र के पक्षकार नहीं थे और वैसे भी यह एक नाममात्र का विभाजन पत्र था, इसलिए विभाजन पत्र के पक्षकार दस्तावेज़ के निष्पादन के बाद भी संपत्ति के संयुक्त आधिपत्य में रहे, संयुक्त रूप से रहे, उस पर अमल नहीं किया गया और इसलिए, वादीगण द्वारा विभाजन हेतु वाद प्रस्तुत करने के लिए परिसीमा की अवधि लागू नहीं होगी, विशेष रूप से तब जब उक्त विलेख के निष्पादन की तिथि पर वादीगण अवयस्क थे। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 'रत्नम चेट्टियार एवं अन्य बनाम एस.एम. कुप्पुस्वामी चेट्टियार एवं अन्य', (1976) 1 एस सी सी 214; और 'सुहृद सिंह @ सरदूल सिंह बनाम रणधीर सिंह एवं अन्य', 2010 (3) सीजीएलजे 252 (एस सी) के मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

11. ग्राह्यता के प्रश्न पर पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

12. यद्यपि ग्राह्यता के चरण में प्रत्यर्थीगण को सुना जाना आवश्यक नहीं है, तथापि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 ने केवियट पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है, और आदेश दिनांक 3.7.2023 के माध्यम से प्रत्यर्थी क्रमांक 3 से 7 को नोटिस जारी किए गए थे, अतः तथ्यों के उचित मूल्यांकन हेतु प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 के विद्वान अधिवक्ता को भी ग्राह्यता के प्रश्न पर सुना गया।

13. निर्विवाद रूप से, सिविल वाद की विषय–वस्तु वाली संपत्ति स्वर्गीय रामावतार तिवारी की पैतृक संपत्ति है, जो वादीगण, प्रतिवादी क्रमांक 6, 7 और एक मंजू तिवारी के पिता तथा प्रतिवादी क्रमांक 1 के पति थे। यह भी निर्विवाद है कि स्वर्गीय रामावतार तिवारी एक सरकारी कर्मचारी थे जो शिक्षक के रूप में कार्यरत थे और सेवाकाल के दौरान 8.8.1984 को उनकी मृत्यु हो गई थी। प्रतिवादी क्रमांक 6 द्वारा प्रस्तुत अनुकंपा नियुक्ति का आवेदन इस आधार पर खारिज

कर दिया गया था कि प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 के संयुक्त नाम पर दर्ज कृषि संपत्ति 5 एकड़ से अधिक होने के कारण प्रतिवादी क्रमांक 6 आर्थिक रूप से सुदृढ़ है।

14. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा दिनांक 19.1.1993 को निष्पादित पंजीकृत विभाजन पत्र के संबंध में उठाए गए आधारों के मूल्यांकन हेतु—जिस पर उनके अनुसार अमल किया जा चुका है और इसलिए वह अंतिम हो गया, तथा वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6 में दिनांक 9.9.2005 से किए गए संशोधन से उन वादीगण को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा जो संयुक्त परिवार के सदस्य (सहदायक) हैं, क्योंकि 1923 के अधिनियम की संशोधित धारा 6 के लागू होने से बहुत पहले ही उत्तराधिकार सप्रतिबंध हो गया था—मैंने विचारण न्यायालय और अपीलीय न्यायालय के अभिलेखों का अवलोकन किया है।

15. वादपत्र में, वादीगण, जो स्वर्गीय रामावतार तिवारी के परिवार की पुत्रियां और सहदायक हैं, ने विशेष रूप से यह अभिवचन किया है कि दिनांक 19.1.1993 का पंजीकृत विभाजन पत्र एक नाममात्र का विभाजन पत्र था। उन्होंने उस उद्देश्य का भी अभिवचन किया जिसके लिए ऐसा विभाजन पत्र निष्पादित किया गया था, और यह विनिर्दिष्ट किया कि इसे केवल स्वर्गीय रामावतार तिवारी के पुत्र, प्रतिवादी क्रमांक 6 के पक्ष में अनुकंपा नियुक्ति का लाभ प्राप्त करने के लिए निष्पादित किया गया था। अनुकंपा नियुक्ति प्रदान करने हेतु आवेदन के खारिज होने के संबंध में वादपत्र में किए गए अभिवचनों का प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा अपने जवाब दावा में विशेष रूप से खंडन नहीं किया गया है। वास्तव में, जवाब दावा के कंडिका–4 में यह विशिष्ट अभिवचन है कि रामावतार तिवारी की मृत्यु के पश्चात, एक पारिवारिक समझौते के तहत यह सहमति बनी थी कि प्रतिवादी क्रमांक 6 को अनुकंपा नियुक्ति दी जाए; प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 को संयुक्त रूप से पांच एकड़ भूमि दी जाए और शेष भूमि प्रतिवादी क्रमांक 7 को दी जाए। अतः, वादीगण को वाद प्रस्तुत करने का कोई अधिकार नहीं है। प्रतिवादी क्रमांक 1, जो वादीगण के साथ–साथ प्रतिवादी क्रमांक 6 और 7 की माता है, ने पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन के अभिवचन को नाममात्र का होना स्वीकार करते हुए अपना जवाब दावा प्रस्तुत किया है। यह भी अभिवचन किया गया था कि रामावतार तिवारी की मृत्यु की तिथि पर, 1956 के अधिनियम की धारा 8 के प्रावधान के अनुसार, निर्वसीयती मृत पुरुष की संतानें प्रथम श्रेणी की वारिस होती हैं और रामावतार तिवारी की मृत्यु के बाद, उत्तराधिकारी और प्रथम श्रेणी के वारिस होने के नाते प्रतिवादी क्रमांक 1 सहित उन सभी के पक्ष में वाद संपत्ति पर अधिकार प्रोद्भूत हो गया था। जोतों के अग्रिम विभाजन हेतु प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा 14.5.2013 को सहमति पत्र के निष्पादन के

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

संबंध में वादपत्र में किए गए अभिवचनों को भी स्वीकार किया गया है। प्रतिवादी क्रमांक 7 ने यद्यपि दिनांक 14.5.2013 के दस्तावेज़ को स्वीकार किया, तथापि इसे अवैध बताया।

16. पंजीकृत विभाजन पत्र को प्रदर्श पी–5 के रूप में चिह्नित किया गया है, जिसके अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि उक्त दस्तावेज़ में प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 'प्रथम पक्ष' हैं, जबकि प्रतिवादी क्रमांक 2 'द्वितीय पक्ष' है। वादीगण, जो सहदायक और संयुक्त परिवार के सदस्य हैं, प्रदर्श पी–5 में पक्षकार नहीं हैं। विभाजन पत्र में इस बात का कोई विशिष्ट उल्लेख नहीं है कि उन्होंने भी विभाजन पत्र के प्रथम पक्ष और द्वितीय पक्ष के बीच निष्पादित विभाजन के लिए अपनी सहमति दी थी या उन्होंने वाद संपत्ति, जो कि एक संयुक्त परिवार की पैतृक संपत्ति है, पर अपना अधिकार त्याग दिया है।

17. वादी साक्षी–1 (अ.सा.–1) नीता दुबे ने अपनी मुख्य परीक्षा के कंडिका–3 में विभाजन पत्र प्रदर्श पी–5 (नाममात्र का) के निष्पादन के कारण के बारे में बताया है और कहा है कि यह परिवार के सदस्यों के बीच नहीं था। आगे यह भी कहा गया है कि केवल वादीगण के अधिकारों को समाप्त करने के आशय से, प्रतिवादी क्रमांक 1 (माता) और प्रतिवादी क्रमांक 6 एवं 7 (भाइयों) के बीच दिनांक 14.5.2013 को सहमति पत्र निष्पादित किया गया था और उक्त सहमति पत्र (प्रदर्श पी–3) के आधार पर 26.8.2013 को तहसीलदार के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया गया था, जिसे इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि मौखिक विभाजन हुआ था और इसमें स्वत्व का प्रश्न शामिल है। आदेश पत्रिका प्रदर्श पी–4 के रूप में दाखिल है। इस साक्षी ने प्रतिपरीक्षा में इस सुझाव से इनकार किया कि उसे विभाजन पत्र प्रदर्श पी–5 के निष्पादन की जानकारी थी। उसने यह भी बताया कि विभाजन पत्र के अनुसार, प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 को संयुक्त रूप से 05 एकड़ भूमि प्राप्त हुई और प्रतिवादी क्रमांक 7 को 24.23 एकड़ भूमि प्राप्त हुई।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. रीता शर्मा (वादी साक्षी–2) ने भी बयान दिया कि उसे पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन की जानकारी नहीं थी। उसे विभाजन पत्र नहीं दिखाया गया था। प्रतिपरीक्षा में उसने बताया कि उसे विभाजन पत्र के बारे में जानकारी वर्ष 2013 में हुई।

19. प्रतिवादी क्रमांक 7 का परीक्षण प्रतिवादी साक्षी–1 (ब.सा.–1) के रूप में किया गया और अपनी प्रतिपरीक्षा के कंडिका–1 में उसने बताया कि उसने अपनी पढ़ाई कक्षा 12 वीं से बी.कॉम द्वितीय वर्ष तक साजा में की और उसके बाद आगे की पढ़ाई के लिए दुर्ग चला गया, जहाँ उसने 1999 तक शिक्षा प्राप्त की। उसने स्वीकार किया कि उसकी शिक्षा का सारा खर्च ग्राम उरैया से भेजा जाता था। उसकी पढ़ाई का खर्च पैतृक संपत्ति की आय से भेजा जाता था। उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उस अवधि के दौरान कृषि कार्य प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 द्वारा

किए गए थे। हालांकि, उसने स्वीकार किया कि वे संयुक्त रूप से कृषि कार्य कर रहे थे। उसने आगे स्वीकार किया कि कृषि भूमि पट्टे पर दी गई थी और भूमि से प्राप्त आय का उपयोग परिवार के भरण–पोषण और आगे कृषि भूमि खरीदने में किया जा रहा है। उसने स्वीकार किया कि 2007 से पहले, उसकी माँ और भाई (प्रतिवादी क्रमांक 6) ने संयुक्त रूप से कार्य किया था और उसी आय से पूरे परिवार का भरण–पोषण होता है। उसने यह भी स्वीकार किया कि पक्षकारों के बीच विवाद वर्ष 2013 में उत्पन्न हुआ। कंडिका–58 में उसने स्वीकार किया कि दिनांक 19.1.1993 का विभाजन पत्र उसके भाई को अनुकंपा नियुक्ति दिलाने के लिए निष्पादित किया गया था।

20. अभिलेख में उपलब्ध उपरोक्त साक्ष्य, अर्थात् विभाजन पत्र (प्रदर्श पी–5) की विषय–वस्तु से यह स्पष्ट है कि पैतृक संपत्ति के अन्य सहदायक इसमें पक्षकार नहीं हैं। वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 8, 9 और 10 के प्रावधानों के अनुसार, जीवित पुत्र और पुत्रियाँ प्रथम श्रेणी के वारिस हैं और उत्तराधिकार के सामान्य नियम के अनुसार, निर्वसीयती मृत हिंदू पुरुष की संपत्ति सर्वप्रथम अनुसूची की प्रथम श्रेणी में निर्दिष्ट रिश्तेदारों/वारिसों पर न्यागत होगी। प्रथम श्रेणी के वारिसों की अनुसूची के अंतर्गत, अन्य लोगों के साथ पुत्रियों को भी शामिल किया गया है। वर्ष 1984 में पिता स्वर्गीय रामावतार तिवारी की मृत्यु के पश्चात, पैतृक संपत्ति में वादीगण का अधिकार और हिस्सा प्रोद्भूत हो गया था और वे दिनांक 19.1.1993 को तैयार किए गए विभाजन पत्र (प्रदर्श पी–5) में पक्षकार नहीं थे। प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा अपने जवाब दावा में किया गया यह अभिवचन कि वादीगण ने पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन की तिथि पर अपने अधिकारों का त्याग कर दिया था, भी प्रमाणित नहीं होता है क्योंकि प्रदर्श पी–5 में वादीगण के हस्ताक्षर के तहत ऐसा कोई उल्लेख नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

21. विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय में पंजीकृत विभाजन पत्र की प्रकृति, उन परिस्थितियों जिनमें इसे निष्पादित किया गया था, और संबंधित साक्षियों के साक्ष्य पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति है; वाद संपत्ति के संबंध में विभाजन पत्र (प्रदर्श पी–5) केवल प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 के बीच निष्पादित किया गया था, जबकि वादीगण, जो उत्तराधिकारी भी हैं, इसमें पक्षकार नहीं हैं क्योंकि इसमें उनके हस्ताक्षर नहीं हैं। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार, किसी हिंदू पुरुष की मृत्यु पर, उसकी संपत्ति का उसके वारिसों के बीच विभाजन किया जाना आवश्यक है। अभिलेख में ऐसा कोई दस्तावेजी या स्वतंत्र मौखिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जिससे यह स्थापित हो सके कि वादीगण ने वाद संपत्ति में अपना हिस्सा त्याग दिया है। उक्त विभाजन पत्र प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 के बीच

निष्पादित किया गया था, जिसके आधार पर भू–अभिलेखों में प्रतिवादी क्रमांक 6 और 7 के नाम दर्ज किए गए हैं। चूंकि विभाजन पत्र विधि के अनुसार निष्पादित नहीं किया गया है और साथ ही उन वादीगण के हितों के विरुद्ध है जिनका पैतृक संपत्ति में अधिकार है, अतः वह वादीगण पर किसी भी प्रकार से आबद्धकर नहीं है और वे वाद संपत्ति में प्रत्येक एक–सातवें हिस्से के हकदार हैं। विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष को प्रथम अपीलीय न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के माध्यम से संपुष्ट किया है। विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा संपुष्ट किया गया उक्त निष्कर्ष साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित एक तथ्यात्मक निष्कर्ष है, अतः इसमें द्वितीय अपील में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता।

22. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6(1) के परंतुक और धारा 6(5) के आधार पर दिए गए इस तर्क के संबंध में कि धारा 6 उस विभाजन पर लागू नहीं होगी जो 20.12.2004 से पहले प्रभावी हो चुका है, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में कोई बल नहीं है; क्योंकि पूर्ववर्ती अनुच्छेदों में इस न्यायालय ने संबंधित पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों, विशेष रूप से प्रतिवादी क्रमांक 7 द्वारा अपने साक्ष्य में की गई इस स्वीकारोक्ति के आधार पर कि विभाजन पत्र के निष्पादन के बाद भी प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और प्रतिवादी क्रमांक 7 पैतृक संपत्ति के संयुक्त आधिपत्य में थे, संयुक्त रूप से कृषि कार्य कर रहे थे, संयुक्त परिवार की संपत्ति की आय से संयुक्त परिवार का भरण–पोषण कर रहे थे, और संयुक्त परिवार की संपत्ति की आय से ही प्रतिवादी क्रमांक 7 की शिक्षा का व्यय प्रतिवादी क्रमांक 1 और 6 द्वारा वहन किया गया था—अतः साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि यद्यपि विभाजन पत्र निष्पादित किया गया था, परंतु संपत्ति का कोई पृथक्करण नहीं हुआ था।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

23. अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के तर्क का मूल्यांकन करने के लिए, मैं वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6 के प्रासंगिक प्रावधान को उद्धृत करना उचित समझता हूँ:—

"6. सहदायिकी संपत्ति में हित का न्यायगमन—

(1) हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के प्रारंभ होने पर और उससे, मिताक्षरा विधि द्वारा शासित किसी संयुक्त हिंदू परिवार में, किसी सहदायक की पुत्री—

(क) जन्म से ही उसी प्रकार अपने अधिकार में सहदायक बन जाएगी जैसे कि पुत्र;

(ख) सहदायिकी संपत्ति में वही अधिकार रखेगी जो वह रखती यदि वह पुत्र होती;

(ग) उक्त सहदायिकी संपत्ति के संबंध में उन्हीं दायित्वों के अधीन होगी जो पुत्र के होते हैं, और हिंदू मिताक्षरा सहदायक के प्रति किसी निर्देश के अंतर्गत सहदायक की पुत्री के प्रति निर्देश सम्मिलित माना जाएगा:"

परंतु इस उपधारा में अंतर्विष्ट कोई भी बात 20 दिसंबर, 2004 के पूर्व हुए संपत्ति के किसी भी व्ययन या हस्तांतरण को, जिसमें कोई विभाजन या वसीयती व्ययन शामिल है, प्रभावित या अमान्य नहीं करेगी।

(2) xxxxx

(3) जहाँ किसी हिंदू की मृत्यु हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के प्रारंभ के पश्चात होती है, वहाँ मिताक्षरा विधि द्वारा शासित संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति में उसका हित, उत्तरजीविता द्वारा नहीं, बल्कि इस अधिनियम के अधीन यथास्थिति वसीयती या निर्वसीयती उत्तराधिकार द्वारा न्यागत होगा, और सहदायिकी संपत्ति के बारे में यह माना जाएगा कि उसका विभाजन इस प्रकार हो गया है मानो कोई विभाजन हुआ हो, और—

(क) पुत्री को उतना ही हिस्सा आवंटित किया जाएगा जितना पुत्र को आवंटित किया गया है;

(ख) पूर्व–मृत पुत्र या पूर्व–मृत पुत्री का हिस्सा, जो उन्हें विभाजन के समय जीवित होने पर प्राप्त होता, ऐसे पूर्व–मृत पुत्र या ऐसी पूर्व–मृत पुत्री की जीवित संतान को आवंटित किया जाएगा; और

(ग) पूर्व–मृत पुत्र या पूर्व–मृत पुत्री की पूर्व–मृत संतान का हिस्सा, जो ऐसी संतान को विभाजन के समय जीवित होने पर प्राप्त होता, ऐसी पूर्व–मृत संतान की संतान को, यथास्थिति, आवंटित किया जाएगा।

स्पष्टीकरण— इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, किसी हिंदू मिताक्षरा सहदायक का हित संपत्ति में वह हिस्सा माना जाएगा जो उसकी मृत्यु के ठीक पूर्व संपत्ति के विभाजन होने पर उसे आवंटित किया जाता, चाहे वह विभाजन का दावा करने का हकदार था या नहीं।

4. xxxxx

5. इस धारा में अंतर्विष्ट कोई भी बात उस विभाजन पर लागू नहीं होगी जो 20 दिसंबर, 2004 के पूर्व प्रभावी हो चुका है।

स्पष्टीकरण— इस धारा के प्रयोजनों के लिए "विभाजन" का अर्थ है पंजीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के अधीन सम्यक् रूप से पंजीकृत विभाजन विलेख के निष्पादन द्वारा किया गया कोई भी विभाजन या न्यायालय की डिक्री द्वारा प्रभावी विभाजन।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

24. उपरोक्त उद्धृत प्रावधान के मात्र अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6 की उपधारा (1) यह परिकल्पित करती है कि यह उपधारा 20 दिसंबर, 2004 के पूर्व हुए संपत्ति के किसी भी व्ययन या हस्तांतरण को, जिसमें कोई विभाजन या वसीयती व्ययन शामिल है, अमान्य नहीं करेगी। धारा 6 की उपधारा (5), जो अध्यारोही खंड से प्रारंभ होती है, इस धारा को उस विभाजन पर लागू नहीं करती है जो 20 दिसंबर, 2004 के पूर्व प्रभावी हो चुका है। उपधारा (5) में संलग्न स्पष्टीकरण 'विभाजन' को परिभाषित करता है, जिसका अर्थ है पंजीकरण अधिनियम, 1908 के अधीन सम्यक् रूप से पंजीकृत विभाजन विलेख के निष्पादन द्वारा किया गया कोई भी विभाजन या न्यायालय की डिक्री द्वारा प्रभावी विभाजन। यह निर्विवाद है कि विभाजन पत्र (प्रदर्श पी–5) एक पंजीकृत दस्तावेज़ है, हालांकि, दिए गए तथ्यों, परिस्थितियों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आलोक में, यह देखा जाना है कि क्या विभाजन नाममात्र का है या यह विभाजन पत्र में वर्णित सीमाओं और मेड़ों के अनुसार क्रियान्वित किया गया है। प्रतिवादी क्रमांक 7 के साक्ष्य में, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, उसने स्वीकार किया है कि विभाजन पत्र के निष्पादन की तिथि से वर्ष 2013 तक कोई विवाद नहीं था। प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 (विभाजन पत्र के पक्षकार) पैतृक संपत्ति के संयुक्त आधिपत्य में थे, संयुक्त रूप से कृषि कार्य कर रहे थे, और संयुक्त परिवार की संपत्ति से प्राप्त आय का संयुक्त रूप से उपभोग कर रहे थे। अतः, प्रतिवादी क्रमांक 7—जिसे विभाजन पत्र में अन्य दो नामित व्यक्तियों की तुलना में कहीं अधिक हिस्सा आवंटित किया गया है और अन्य उत्तराधिकारियों को छोड़ दिया गया है—के उक्त विशिष्ट साक्ष्य के दृष्टिगत, दस्तावेज़ प्रदर्श पी–5 की प्रकृति को विधि के अनुसार वैध विभाजन के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

25. अभिलेख में उपलब्ध उपरोक्त साक्ष्य, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा विभाजन पत्र के पक्षकारों के आशय से, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि संपत्ति 'सप्रतिबंध दाय' के रूप में थी और इसलिए, इस न्यायालय की राय में, वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6(1) के परंतुक और धारा 6(5) वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते हैं। माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा एवं अन्य', (2020) 9 एस सी सी 1 के मामले में, वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 6 के संशोधित प्रावधानों (जो 9.9.2005 को संशोधित हुए) पर विचार करते हुए इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है:—

"60. धारा 6(1) के संशोधित प्रावधान यह उपबंधित करते हैं कि संशोधन अधिनियम के प्रारंभ होने पर और उससे, पुत्री को अधिकार प्रदान किया गया है। धारा 6(1)(क) पुत्री को जन्म से ही "अपने अधिकार में" और "उसी रीति से जैसे पुत्र को" सहदायक बनाती है। धारा 6(1)(क) में

मिताक्षरा सहदायिकी के 'अप्रतिबंध दाय' की अवधारणा निहित है, जो जन्म के आधार पर प्राप्त होती है। धारा 6(1)(ख) सहदायिकी संपत्ति में वही अधिकार प्रदान करती है "जो उसे प्राप्त होते यदि वह पुत्र होती"।"

"अधिकार का प्रदान किया जाना जन्म से है, और अधिकार सहदायिकी के उन्हीं लक्षणों के साथ उसी रीति से दिए गए हैं जैसे कि एक पुत्र को प्राप्त होते हैं, और उसे (पुत्री को) उसी रीति से और उन्हीं अधिकारों के साथ एक सहदायक माना जाता है मानो वह जन्म के समय पुत्र रही हो। यद्यपि इन अधिकारों का दावा 09.09.2005 से किया जा सकता है, फिर भी ये प्रावधान भूतलक्षी अनुप्रयोग वाले हैं; वे पूर्वगामी घटना के आधार पर लाभ प्रदान करते हैं, और मिताक्षरा सहदायिकी विधि में सहदायक के रूप में पुत्री के प्रति निर्देश सम्मिलित माना जाएगा। इसके साथ ही, विधायिका ने एक परंतुक जोड़कर बचाव का प्रावधान किया है कि संपत्ति का कोई भी व्ययन या हस्तांतरण, चाहे वह संपत्ति का कोई वसीयती व्ययन हो या विभाजन, जो 20.12.2004 (वह तिथि जिस दिन विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत किया गया था) से पहले हुआ हो, अमान्य नहीं होगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

67.धारा 6 (1) का परंतुक और धारा 6 (5), 20.12.2004 से पहले प्रभावी हुए किसी भी विभाजन का बचाव करते हैं। हालांकि, धारा 6 (1) (5) का स्पष्टीकरण केवल उन विभाजनों को मान्यता देता है जो पंजीकरण अधिनियम, 1908 के तहत सम्यक् रूप से पंजीकृत विभाजन विलेख के निष्पादन द्वारा या न्यायालय की डिक्री द्वारा प्रभावी हुए हों। स्पष्टीकरण में 'विभाजन' की परिभाषा के तहत विभाजन के अन्य रूपों को मान्यता नहीं दी गई है।

68.सहदायिकी के इस सिद्धांत पर विचार करते हुए कि मिताक्षरा सहदायिकी में किसी व्यक्ति को जन्म से अधिकार प्राप्त होते हैं, ठीक उसी तरह पुत्री को भी एक सहदायक के रूप में मान्यता दी गई है और उसके साथ पुत्र के समान ही अधिकारों और दायित्वों वाला व्यवहार किया गया है। धारा 6 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति यह है कि वह उसी रीति से सहदायक बनती है जैसे पुत्र। दत्तक ग्रहण द्वारा भी सहदायक की स्थिति प्रदान की जा सकती है। 'अप्रतिबंध दाय' के असंहिताबद्ध हिंदू विधि की अवधारणा को धारा 6 (1) (क) और धारा 6 (1) (ख) के प्रावधानों के तहत एक ठोस स्वरूप दिया गया है। सहदायक का अधिकार जन्म से होता है। अतः, यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है कि संशोधन की तिथि पर पुत्री का पिता जीवित हो, क्योंकि उसे 'सप्रतिबंध दाय' द्वारा सहदायक के अधिकार प्रदान नहीं किए गए हैं। प्रशासित मिताक्षरा सहदायिकी हिंदू विधि के अनुसार, जिसे धारा 6 (1) में मान्यता दी गई है, यह आवश्यक नहीं है कि संशोधन की तिथि पर कोई जीवित सहदायक या पिता हो जिसका पुत्री उत्तराधिकारी बने। पुत्री अधिनियम के

पहले या बाद में जन्म लेकर पुत्र की भांति सहदायिकी में कदम रखेगी। हालांकि, पहले जन्मी पुत्री इन अधिकारों का दावा केवल संशोधन की तिथि, अर्थात् 09.09.2005 से ही कर सकती है, जिसमें धारा 6 (5) के साथ पठित धारा 6 (1) के परंतुक में दिए गए पूर्व लेनदेन के बचाव लागू होंगे।

69.संशोधन का प्रभाव यह है कि पुत्री को संशोधन की तिथि से सहदायक बना दिया गया है और वह विभाजन का दावा भी कर सकती है, जो सहदायिकी का एक आवश्यक सहवर्ती लक्षण है। धारा 6 (1) मिताक्षरा विधि द्वारा शासित एक संयुक्त हिंदू परिवार को मान्यता देती है। सहदायक की पुत्री को प्रदान किए गए अधिकारों का आनंद लेने के लिए 09.09.2005 को सहदायिकी का अस्तित्व होना चाहिए। चूंकि अधिकार जन्म से है न कि विरासत के बल पर, इसलिए यह अप्रासंगिक है कि वह सहदायक जीवित है या नहीं जिसकी पुत्री को अधिकार प्रदान किए गए हैं। अधिकार प्रदान किया जाना पिता या अन्य सहदायक की मृत्यु पर आधारित नहीं है। यदि जीवित सहदायक की मृत्यु 09.09.2005 के बाद होती है, तो उत्तराधिकार उत्तरजीविता द्वारा नहीं, बल्कि प्रतिस्थापित धारा 6 (1) (क) में यथा उपबंधित निर्वसीयती या वसीयती उत्तराधिकार द्वारा होगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

70.यदि वर्तमान मामले के तथ्यों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 'विनीता शर्मा' के मामले में दिए गए उपरोक्त निर्णय के आलोक में विचार किया जाए, तो यह स्पष्ट है कि वादीगण और प्रतिवादी क्रमांक 6 एवं 7 के पिता तथा प्रतिवादी क्रमांक 1 के पति की मृत्यु वर्ष 1984 में निर्वसीयती रूप से हुई थी, जब, जैसा कि अभिवचन और कथन किया गया है, सभी बच्चे नाबालिग थे। विभाजन पत्र भूमि के स्वामी की मृत्यु के नौ साल बाद का है। हालांकि, अपीलार्थीगण (वादीगण), जो वर्ष 1984 में अपने पिता की मृत्यु के बाद वर्ष 1956 के अधिनियम की धारा 8 के तहत विभाजन के लिए लागू पुराने विधि के अनुसार वाद संपत्ति में हिस्से के हकदार हो गए थे, उन्हें विभाजन पत्र में पक्षकार नहीं बनाया गया था, अतः उत्तराधिकार में कोई प्रतिबंध नहीं था। ऐसी स्थिति में, इस न्यायालय की राय में, वर्ष 1956 के अधिनियम की संशोधित धारा 6, अर्थात् 09.09.2005 के लागू होने की तिथि पर सहदायिकी का अस्तित्व था।

27. उपरोक्त के आलोक में, यह न्यायालय विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा संपुष्ट किए गए उन निष्कर्षों में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं पाता है कि दिनांक 19.1.1993 का पंजीकृत विभाजन पत्र वादीगण/वर्तमान

प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 पर आबद्धकर नहीं है और न ही वाद–प्रश्न क्रमांक 6 के प्रमाणित न होने के निष्कर्ष में कोई त्रुटि है। उक्त निष्कर्ष दोनों न्यायालयों द्वारा साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित है।

28. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उठाए गए इस आधार पर विचार करते हुए कि जब तक वादीगण दिनांक 19.1.1993 के पंजीकृत विभाजन पत्र को शून्य और अमान्य घोषित करने की सहायता नहीं मांगते, तब तक वाद चलने योग्य नहीं होगा। स्वीकार्य रूप से, रामावतार तिवारी की मृत्यु के बाद वादीगण संयुक्त परिवार के सदस्य थे, परंतु वे विभाजन पत्र प्रदर्श पी–5 में पक्षकार नहीं थे। विलेख का निष्पादन न करने वाले व्यक्ति द्वारा किस सहायता का दावा किया जा सकता है, इस संबंध में प्रश्न माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष 'सुहृद सिंह @ सरदूल सिंह (उपरोक्त)' के मामले में विचारार्थ आया था और यह प्रेक्षित किया गया था कि:—

> "6. जहाँ किसी विलेख का निष्पादक उसे रद्द कराना चाहता है, उसे विलेख के निरस्तीकरण की मांग करनी होती है। परंतु यदि कोई गैर–निष्पादक विलेख का रद्दीकरण चाहता है, तो उसे यह घोषणा मांगनी होगी कि विलेख अमान्य है, या अस्तित्वहीन है, या अवैध है अथवा वह उस पर आबद्धकर नहीं है। हस्तांतरण/हस्तांतरण–पत्र के विलेख के संबंध में निरस्तीकरण और घोषणा की प्रार्थना के बीच के अंतर को 'A' और 'B' — दो भाइयों से संबंधित निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। 'A', 'C' के पक्ष में एक विक्रय विलेख निष्पादित करता है। तत्पश्चात 'A' उस विक्रय से बचना चाहता है। 'A' को विलेख के निरस्तीकरण हेतु वाद लाना होगा। दूसरी ओर, यदि 'B', जो विलेख का निष्पादक नहीं है, उससे बचना चाहता है, तो उसे यह घोषणा करने हेतु वाद लाना होगा कि 'A' द्वारा निष्पादित विलेख अमान्य/शून्य और अस्तित्वहीन/अवैध है और वह उससे आबद्ध नहीं है। सारत: दोनों विलेख को निरस्त कराने या उसे गैर–आबद्धकर घोषित कराने हेतु वाद ला सकते हैं। परंतु प्रारूप भिन्न है और न्यायालय शुल्क भी भिन्न है....।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

वर्तमान मामले में, वादीगण स्वीकार्य रूप से विभाजन पत्र, प्रदर्श पी–5 के पक्षकार नहीं थे, और इसलिए उनके द्वारा दावा की गई यह सहायता कि विलेख प्रदर्श पी–5 उन पर आबद्धकर नहीं है, पर्याप्त और न्यायसंगत है। अतः, अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का उक्त तर्क पोषणीय नहीं है।

29. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उठाया गया अंतिम आधार यह है कि वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है। वादपत्र में यह विशिष्ट अभिवचन है कि वादीगण दस्तावेज़ प्रदर्श पी–5 के पक्षकार नहीं थे और उन्हें पंजीकृत विभाजन पत्र के निष्पादन के बारे में जानकारी नहीं थी। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, तथ्यों और साक्ष्यों से, प्रतिवादी क्रमांक 7 और अन्य साक्षियों के साक्ष्य से यह प्रतीत हो रहा है कि यद्यपि पंजीकृत विभाजन पत्र प्रतिवादी क्रमांक 6 के पक्ष में अनुकंपा नियुक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से निष्पादित किया गया था, तथापि उस पर अमल नहीं किया गया था और पैतृक संपत्ति प्रतिवादी क्रमांक 1, 6 और 7 के संयुक्त आधिपत्य में बनी रही। उन्होंने संयुक्त रूप से कृषि भूमि पर खेती की, संयुक्त परिवार की संपत्ति की आय का संयुक्त रूप से उपभोग किया और इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पैतृक संपत्ति का विधि के अनुसार कोई विभाजन नहीं हुआ था, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा संपुष्ट किया गया है।

30. अभिलेख पर उपलब्ध अभिवचनों और साक्ष्यों के अनुसार, विवाद वर्ष 2013 में उत्पन्न हुआ जब सहमति पत्र के आधार पर तहसीलदार के न्यायालय में एक आवेदन प्रस्तुत किया गया और उसके बाद एक वर्ष आठ महीने की अवधि के भीतर वाद प्रस्तुत किया गया। माननीय उच्चतम न्यायालय ने 'रत्नम चेट्टियार' के मामले में विभाजन को पुनः खोलने के संबंध में सिद्धांत प्रतिपादित किया है और इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है:—

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "16. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि पूरे मामले का व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए न्यायालय को यह धारित करना चाहिए कि यह अनुचित या अन्यायपूर्ण विभाजन का मामला नहीं था, क्योंकि प्रतिवादी क्रमांक 1 और 5 दोनों ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें व्यवसाय का गहरा अनुभव था और उन्होंने स्वेच्छा से संपत्तियों के विभाजन को स्वीकार किया था जो मोटे तौर पर समान था। विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के 'देवराजन एवं अन्य बनाम जानकी अम्माल एवं अन्य' के निर्णय का अवलंब लिया है, जहाँ इस न्यायालय ने निम्नानुसार प्रेक्षण किया था:
>
> 'सामान्यतया, एक बार प्रभावी हुआ विभाजन अंतिम होता है और इसे केवल हिस्सों की असमानता के आधार पर पुनः नहीं खोला जा सकता है, हालांकि धोखाधड़ी या गलती या पारिवारिक संपत्ति की बाद में प्राप्ति के मामले में इसे पुनः खोला जा सकता है: [देखें मोरो विश्वनाथ बनाम

गणेश विट्ठल (1873) 10 बॉम्बे एच सी आर 444]। इसके अतिरिक्त, सहदायकों की सामान्य सहमति से विभाजन के दौरान सद्भावपूर्वक किया गया आवंटन तब आक्षेप योग्य नहीं होता जब हिस्से पूर्णतः समान न हों, या विधि द्वारा तय किए गए हिस्सों के कड़ाई से अनुरूप न हों। यह सत्य है कि नाबालिगों को विधि में विभाजन को पुनः खोलने की अनुमति तब दी जाती है जब यह सिद्ध हो जाए कि विभाजन उनके लिए अनुचित और अन्यायपूर्ण रहा है। फिर भी, जब तक एक सदस्य द्वारा दूसरे के विरुद्ध कोई धोखाधड़ी, अनुचित व्यवहार या अति–चतुराई न हो, हिंदू विधि की यह अपेक्षा है कि सहदायकों की सामान्य सहमति के आधार पर सद्भावपूर्वक किए गए विभाजन का सम्मान किया जाना चाहिए और वह अप्रतिसंहरणीय है:"

यह निवेदित किया गया कि मामले के साक्ष्य और परिस्थितियाँ स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं कि हिस्सों में कोई असमानता नहीं थी और कपट या भूल के तर्क को न्यायालयों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है तथा कुल मिलाकर विभाजन सद्भावपूर्वक था। यह सत्य है कि यदि स्थिति ऐसी होती, तो 'देवराजन' के मामले (पूर्वोक्त) में दिए गए निर्णय का अनुपात निस्संदेह इस मामले पर लागू होता। परंतु इस न्यायालय ने इन्हीं प्रेक्षणों में, जिन्हें हमारे द्वारा रेखांकित किया गया है, यह स्पष्ट करने की सावधानी बरती थी कि यह नियम उन अवयस्कों पर लागू नहीं होता है, जिन्हें विधि में निस्संदेह विभाजन को पुनः खोलने की अनुमति दी गई है, यदि एक बार यह सिद्ध हो जाए कि विभाजन उनके लिए अनुचित या अन्यायपूर्ण था। दो अधीनस्थ न्यायालयों के तथ्यों के इस समवर्ती निष्कर्ष के दृष्टिगत कि चल संपत्तियों का विभाजन, शेयरों से संबंधित संपत्तियों को छोड़कर, अनुचित और अन्यायपूर्ण था, ऊपर उल्लिखित निर्णय के अनुसार भी चल संपत्तियों के संबंध में विभाजन को पुनः खोला जाना आवश्यक है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

19.इस प्रकार ऊपर चर्चित प्राधिकारियों और इस विषय पर विधि पर विचार करने के पश्चात, निम्नलिखित प्रस्थापनाएं उभर कर आती हैं:

(1) हिंदू अविभक्त परिवार के सदस्यों के बीच उनकी अपनी स्वेच्छा और सहमति से किए गए विभाजन को तब तक पुनः नहीं खोला जा सकता, जब तक कि यह न दिखाया जाए कि वह कपट, प्रपीडन, मिथ्या–व्यपदेशन या असम्यक असर द्वारा प्राप्त किया गया है। ऐसे मामले में न्यायालय को तथ्यों के कड़े प्रमाण की आवश्यकता होनी चाहिए क्योंकि जीवित व्यक्तियों के बीच किए गए कार्य को आसानी से निरस्त नहीं किया जा सकता है।

(2) जब हिंदू अविभक्त परिवार के सदस्यों के बीच विभाजन किया जाता है जिसमें अवयस्क सहदायक शामिल होते हैं, तो वह अवयस्कों पर भी आबद्धकर होता है यदि वह सद्भावपूर्वक और अवयस्कों के हितों को ध्यान में रखते हुए उचित तरीके से किया गया हो।

(3) जहाँ, हालांकि, अवयस्कों वाले हिंदू अविभक्त परिवार के सदस्यों के बीच किया गया विभाजन अन्यायपूर्ण और अनुचित सिद्ध होता है और अवयस्कों के हितों के लिए हानिकारक होता है, तो विभाजन को निश्चित रूप से पुनः खोला जा सकता है, चाहे विभाजन हुए कितना भी समय क्यों न बीत गया हो। ऐसे मामले में यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अवयस्कों के हितों की रक्षा और सुरक्षा करे और यह सिद्ध करने का भार कि विभाजन न्यायपूर्ण और उचित था, विभाजन का समर्थन करने वाले पक्षकार पर होता है।

(4) जहाँ अचल और चल संपत्तियों का विभाजन होता है परंतु वे दो व्यवहार भिन्न और पृथक्करणीय हैं या अलग–अलग समय पर हुए हैं; यदि यह पाया जाता है कि उनमें से केवल एक व्यवहार अन्यायपूर्ण और अनुचित है, तो न्यायालय के लिए यह खुला है कि वह उस व्यवहार को बनाए रखे जो न्यायपूर्ण और उचित है और उस विभाजन को पुनः खोले जो अन्यायपूर्ण और अनुचित है।

हमारी राय में, वर्तमान मामले के तथ्य पूरी तरह से ऊपर इंगित प्रस्थापना क्रमांक (3) और (4) के अंतर्गत आते हैं।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

31. वर्तमान मामले में, सभी सहदायकों की कोई सामान्य सहमति नहीं थी क्योंकि वादीगण, जो वाद संपत्ति में सहदायक हैं, विभाजन पत्र प्रदर्श पी–5 के पक्षकार नहीं थे। चूंकि विभाजन पत्र में परिवार के सहदायकों/वादीगण को कोई हिस्सा आवंटित नहीं किया गया था, उनकी सहमति दर्ज नहीं की गई थी, उक्त विभाजन पत्र, जिसे यद्यपि इस निर्णय के पूर्ववर्ती कंडिकाग्राफों में चर्चा के अनुसार नाममात्र का माना गया है, वादीगण के हितों के लिए अन्यायपूर्ण, अनुचित और हानिकारक था क्योंकि उन्हें कोई हिस्सा आवंटित नहीं किया गया था। अतः, वर्तमान मामले के तथ्यों और माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार, विभाजन हेतु वाद किसी भी समय सहदायक द्वारा लाया जा सकता है।

32. जहाँ तक 'रामिसेट्टी वेंकटन्ना' के मामले में दिए गए निर्णय का संबंध है, जिस का अपीलार्थीगण ने अवलंब लिया है, वह तथ्यों के आधार पर भिन्न होने के कारण अपीलार्थीगण के लिए सहायक नहीं है। उस मामले में, वादीगण ने वादीगण के हित–पूर्वाधिकारियों के बीच हुए विभाजन पत्र में सुधार की मांग की थी और न्यायालय ने यह भी प्रेक्षण किया था कि दिनांक 11.3.1953 के

विभाजन पत्र में त्रुटि होने का मामला अभिवचन करने के बाद भी उक्त विभाजन पत्र के संबंध में कोई सहायता नहीं मांगी गई थी।

33. 'सी. डोड्डानारायण रेड्डी एवं अन्य बनाम सी. जयराम रेड्डी एवं अन्य', (2020) 4 एस सी सी 659 के मामले में, माननीय शीर्ष न्यायालय ने निम्नानुसार प्रेक्षण किया और अभिनिर्धारित किया है:—

"25. विधि का सारभूत प्रश्न उत्पन्न होता है या नहीं, यह प्रश्न इस न्यायालय द्वारा व्याख्या का विषय रहा है। 'कर्नाटक बोर्ड ऑफ वक्फ बनाम अंजुमन–ए–इस्माइल मद्रास–उन–निसवान', (1999) 6 एस सी सी 343 में रिपोर्ट किए गए निर्णय में यह धारित किया गया था कि द्वितीय अपील में तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता था। इस न्यायालय ने निम्नानुसार धारित किया:"

"12. इस न्यायालय ने बार–बार यह धारित किया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत द्वितीय अपील में हस्तक्षेप करने की उच्च न्यायालय की शक्ति पूरी तरह से विधि के सारभूत प्रश्न का निर्णय करने तक सीमित है, यदि मामले में ऐसा कोई प्रश्न उत्पन्न होता है। इसने उच्च न्यायालयों की उस प्रवृत्ति की निंदा की है जिसमें निचली अदालतों द्वारा निकाले गए विशुद्ध तथ्यात्मक निष्कर्षों में नियमित रूप से हस्तक्षेप किया जाता है, बिना इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि तथ्यों का उक्त निष्कर्ष या तो दोषपूर्ण है या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर आधारित नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

14.नवनीतमल बनाम अर्जुन चेट्टी (1996) 6 एस सी सी 166 में, इस न्यायालय ने धारित किया:

'उच्च न्यायालय द्वारा धारा 100 व्ययवहार प्रक्रिया संहिता के तहत निचली अदालतों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप से तब तक बचा जाना चाहिए जब तक कि बाध्यकारी कारणों से ऐसा करना आवश्यक न हो। किसी भी स्थिति में, उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह निचली अदालतों के निष्कर्षों को प्रतिस्थापित करने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करे। ... यदि यह मान भी लिया जाए कि उन्हीं साक्ष्यों के पुनर्मूल्यांकन पर दूसरा दृष्टिकोण संभव है, तो भी उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा नहीं किया जाना चाहिए था क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण किसी सामग्री पर आधारित नहीं था।'

15.और पुनः तालिपरामबा एजुकेशन सोसाइटी बनाम मूथेदथ सी. मल्लिसेरी इल्लम एम.एन. (1997) 4 एस सी सी 484 में, इस न्यायालय ने धारित किया: (एस सी सी पृष्ठ 486, कंडिका 5)

'5. ... उच्च न्यायालय ने धारा 100 व्ययवहार प्रक्रिया संहिता के तहत साक्ष्य के मूल्यांकन में अतिक्रमण करने और तथ्यों के विपरीत निष्कर्ष अभिलिखित करने में भारी भूल की है, जो कि अक्षम्य है।'

29. विद्वान उच्च न्यायालय ने उपर्युक्त निर्णयों में निर्धारित परीक्षणों को संतुष्ट नहीं किया है। दोनों न्यायालयों, विचारण न्यायालय और विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने स्कूल छोड़ने के प्रमाण पत्र की जांच की है और यह निष्कर्ष निकाला है कि ऐसे प्रमाण पत्र से जन्म तिथि सिद्ध नहीं होती है। हो सकता है कि उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए एक अलग दृष्टिकोण अपना सकता था, लेकिन एक बार जब दो न्यायालयों ने ऐसा निष्कर्ष दिया है जो महत्वपूर्ण दस्तावेजों के गलत पठन पर आधारित नहीं है, न ही विधि के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया है, और न ही यह कहा जा सकता है कि न्यायिक और तर्कसंगत रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश ऐसे निष्कर्ष तक नहीं पहुंच सकता था, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च न्यायालय ने त्रुटि की है। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय के समक्ष विचार के लिए विधि का कोई सारभूत प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

30. इस प्रकार, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा संपुष्ट किए गए तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करके विधिक त्रुटि की है। द्वितीय अपील में तथ्यों के निष्कर्षों में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता जब तक कि निष्कर्ष दोषपूर्ण न हों। उच्च न्यायालय तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।"

34. राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम शिव दयाल एवं अन्य, (2019) 8 एस सी सी 637 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार प्रेक्षण किया और निष्कर्ष निकाला है:—

"16. जब द्वितीय अपील में तथ्यों के किसी समवर्ती निष्कर्ष को चुनौती दी जाती है, तो अपीलार्थी यह बताने का हकदार होता है कि यह विधि की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है क्योंकि इसे अभिवचनों से परे दर्ज किया गया था या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था या यह महत्वपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य के गलत पठन पर आधारित था या इसे विधि के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया था और अंत में, निर्णय ऐसा है जिस पर न्यायिक रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश तर्कसंगत रूप से नहीं पहुंच सकता था। (देखें विद्वान न्यायाधीश विवियन बोस, की अवधारणा जब वे नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे, राजेश्वर विश्वनाथ मामिद्वार बनाम दशरथ नारायण चिलवेलकर [1942 एस सी सी ऑनलाइन एमपी 26 : एआईआर 1943 नाग 117])।

35. हमारी राय में, यदि उपर्युक्त में से कोई एक या अधिक आधार, अभिवचन और साक्ष्य के आधार पर किसी उपयुक्त मामले में बनता है, तो ऐसा आधार धारा 100 व्ययवहार प्रक्रिया संहिता के अर्थ के अंतर्गत विधि का सारभूत प्रश्न माना जाएगा।" पूर्वोक्त चर्चा के आलोक में, इस न्यायालय की राय में, दोनों न्यायालयों द्वारा अभिलिखित समवर्ती निष्कर्ष, जो साक्ष्य और वैध एवं तर्कसंगत कारणों द्वारा समर्थित हैं, इस द्वितीय अपील में किसी हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं रखते हैं। यह विधि सुस्थापित है कि यदि विचार के लिए विधि का कोई सारभूत प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है और जब विधि का कोई सारभूत प्रश्न निहित नहीं होता है, तो द्वितीय अपील स्वीकार नहीं की जाएगी।

36. वर्तमान मामले में, चूंकि यह न्यायालय पाता है कि विधि का कोई भी सारभूत प्रश्न निहित नहीं है, इसलिए सुस्थापित विधिक स्थिति और संहिता की धारा 100 की संकुचित परिधि को देखते हुए यह द्वितीय अपील ग्राह्यता के चरण में ही खारिज होने योग्य है। तदनुसार यह न्यायालय पाता है कि द्वितीय अपील को स्वीकार करने का कोई आधार नहीं बनता है।

37. परिणामतः, यह द्वितीय अपील ग्राह्यता के चरण में खारिज की जाती है। वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जा रहा है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही /–

(पार्थ प्रतीम साहू)

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।